संपादकीय जागरण

मंगलवार, 29 मई, 2018 : ज्येष्ठ शुक्ल पूर्णिमा वि. 2075

प्रकृति हमारी सबसे बड़ी शिक्षक है

विदेश मंत्री की दो टूक

मोदी सरकार के कार्यकाल के चार वर्ष पूरे होने पर विदेश मंत्री सुषमा स्वराज ने अपने मंत्रालय की उपलब्धियां गिनाते हुए पाकिस्तान से बातचीत के सवाल पर यह स्पष्ट करके बिल्कुल सही किया कि जब सीमा पर जनाजे उठ रहे हों तब वार्ता का कोई औचित्य नहीं बनता। पाकिस्तान को यह दो टूक संदेश देना इसलिए आवश्यक था, क्योंकि पिछले कुछ समय से उसकी ओर से यह संकेत दिया जा रहा है कि वह भारत से बातचीत को तैयार है। चूंकि यह संकेत खुद पाकिस्तानी सेना प्रमुख के हवाले से दिया गया इसलिए यह रेखांकित करना और भी जरूरी था कि भारत इसकी अनदेखी करने को तैयार नहीं कि सीमा पर उत्पात मचाने के साथ कश्मीर में किस तरह आतंकियों की घुसपैठ कराई जा रही है। आखिर पाकिस्तान यह सोच भी कैसे सकता है कि उसकी ओर से आतंकियों की खेप भेजने के बाद भी भारत उससे बातचीत के लिए तैयार हो जाएगा? कहीं वह विदेश नीति के उन भारतीय विशेषज्ञों से तो उत्साहित नहीं हुआ जो उससे बातचीत की जरूरत जताने के साथ यह भी सलाह दे रहे हैं कि भारत को पाकिस्तानी सेना प्रमुख को नई दिल्ली आमंत्रित करना चाहिए? इन विशेषज्ञों का यह भी मानना है कि अगर भारत ऐसा करे तो पाकिस्तानी सेनाध्यक्ष दौड़े चले आएंगे। यह सही है कि पाकिस्तान से जो भी समस्याएं हैं उनका समाधान बातचीत से ही निकलेगा, लेकिन जब तक इसके ठोस संकेत नहीं मिल जाते कि पाकिस्तान वार्ता के जरिये समस्याओं का हल खोजने के लिए तैयार है तब तक उससे संवाद करना उसके छल की अनदेखी करना और उसके हाथों एक बार फिर धोखा खाने का जोखिम उठाना है। यह जोखिम उठाने की कहीं कोई जरूरत नहीं, क्योंकि अभी तक का अनुभव यही कहता है कि पाकिस्तान भरोसे का खून करने में माहिर है।

मोदी सरकार ने बीते चार सालों में कम से कम तीन बार पाकिस्तान की धोखेबाजी को भुलाकर आगे बढ़ने की कोशिश की, लेकिन उसने हर बार पीठ में खंजर भोंकने का काम किया। गुरदासपुर, पठानकोट और उड़ी में भीषण आतंकी हमले पाकिस्तान की धोखेबाजी के ऐसे उदाहरण हैं जिन्हें भूला नहीं जा सकता। पाकिस्तान ने गुरदासपुर और पठानकोट में हुए आतंकी हमलों की जांच में भी कपट किया-ठीक वैसे ही जैसे उसने मुंबई हमले की जांच में किया। वह अभी भी मुंबई के गुनहगारों के खिलाफ किसी तरह की कार्रवाई करने के बजाय बहाने बनाने में लगा हुआ है। पहले उसका बहाना यह था कि भारत सारे सुबूत नहीं उपलब्ध करा रहा है। अब वह यह कह रहा है कि अजमल कसाब को फांसी देने के बाद उसके लिए आगे बढ़ना मुश्किल हो रहा है। यह बहानेबाजी की पराकाष्ठा ही है कि पाकिस्तानी सेना पूर्व प्रधानमंत्री नवाज शरीफ के उस बयान को भी झूठा साबित करने पर तुली है जिसमें उन्होंने कहा था कि मुंबई में हमला करने वाले आतंकी पाकिस्तान से ही आए थे। सबसे हास्यास्पद हरकत यह है कि पाकिस्तानी सेना अपनी खुफिया एजेंसी आइएसआइ के पूर्व प्रमुख असद दुर्रानी के उन बयानों को भी खारिज कर रहा है जो एक किताब की शक्ल में सामने आए हैं।

राग ईवीएम

कैराना लोकसभा सीट के लिए 54.17 और नूरपुर विधानसभा सीट के लिए सोमवार को हुए उपचुनाव में 61 फीसद मतदान हुआ। यद्यपि पूरे दिन ईवीएम में खराबी को लेकर भाजपा और सभी विपक्षी दलों ने शोर मचाया, लेकिन खराबी ईवीएम की नहीं वीवीपैट की निकली। उपचुनाव में सबसे चर्चित कैराना लोकसभा क्षेत्र ही रहा। यह सीट क्षेत्र से पलायन और रंगदारी का मुद्दा उठाने वाले भाजपा सांसद हुकुम सिंह के निधन के बाद खाली हुई थी। भाजपा ने उनकी पुत्री मृगांका सिंह को चुनावी मैदान में उतारा है। विपक्षी पार्टियों के महागठबंधन के समर्थन से रालोद प्रत्याशी तबस्सुम हसन मैदान में हैं। जिला निर्वाचन अधिकारी का कहना है कि ईवीएम में नहीं, बल्कि कुछ जगहों पर वीवीपैट मशीनों में गर्मी के कारण खराबी आई थी जिन्हें तकनीकी टीम द्वारा या तो ठीक करा दिया गया या बदल दिया गया। अधिकारियों के अनुसार मतदान कतई प्रभावित नहीं हुआ।

ईवीएम पर सवाल उठाकर राजनीतिक दल बार बार अपनी कमजोरी ही प्रदर्शित करते हैं

सच यह है कि मशीन तो मशीन है। उसमें कब क्या खराबी आ जाए, किसे पता। किसी प्रतिकूल परिणाम के अंदेशे में आत्ममंथन के बजाय पहले से ही कोई कुतर्क गढ़ लेने से जनता उस पर विश्वास कर लेगी, यह समझना भूल होगी। बेहतर है कि ईवीएम पर सवाल उठाकर चुनाव आयोग जैसी निष्पक्ष संस्था पर अंगुली उठाने या सत्ताधारी पार्टी पर दोषारोपण के बजाय विपक्षी पार्टियों को आत्मचिंतन करना चाहिए। फिलहाल अब तो 31 मई को ही पता चलेगा कि किसके भाग्य में क्या रहा, लेकिन पार्टियों ने फिर से ईवीएम राग छेड़ दिया है जो लंबा खिंच सकता है। यह ठीक नहीं है। ईवीएम पर सवाल उठाकर राजनीतिक दल बार बार अपनी कमजोरी ही प्रदर्शित करते हैं।

कह के रहेंगे

माधव जोशी

जागरण जनमत

कल का परिणाम

क्या इस बार आइपीएल लोकप्रियता की कसौटी पर खरा उतरा है?

आज का सवाल

क्या राजनीतिक दलों को सूचना का अधिकार कानून के दायरे में लाया जाना चाहिए?

अपनी राय और अधिक लोगों तक पहुंचाने के लिए अपने मोबाइल के मैसेज बॉक्स में जाकर POLL लिखें, स्पेस देकर Y, N या C लिखकर 57272 पर भेजें
Y -हां, N-नहीं, C-कह नहीं सकते

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है। सभी आंकड़े प्रतिशत में।

विदेश नीति के मोर्चे पर मिश्रित नतीजे

ब्रह्मा चेलानी

मोदी ने अपनी शख्सियत के दम पर दुनिया के तमाम नेताओं से सहज रिश्ते कायम किए हैं, लेकिन निजी समीकरणों वाली उनकी कूटनीति से ज्यादा ठोस फायदे नहीं मिले

नरेंद्र मोदी सरकार ने चार साल पूरे कर लिए और इसी के साथ एक अहम सवाल यह भी उठ रहा है कि क्या मोदी राज भारत के लिए निर्णायक पड़ाव के रूप में उभरेगा? बिल्कुल वैसे जैसे शी चिनफिंग के राज में चीन का उत्कर्ष हुआ है? मोदी से जुड़े प्रश्न का उत्तर अभी भी स्पष्ट नहीं है। हालांकि एक बात निश्चित है कि मोदी सरकार में भारतीय राजनीति और राजनय की दिशा जरूर बदली है। लोकतांत्रिक राजनीति में मोदी का रिकॉर्ड शानदार रहा है। उन्होंने कई चुनावों में अपनी भाजपा को शानदार विजय दिलाई है। इससे उनकी पार्टी एक बड़ी राजनीतिक ताकत बन गई है। वहीं विदेश नीति के मोर्चे पर मोदी का रिकॉर्ड मिश्रित है। मोदी के आने से राजनीतिक स्थायित्व को बल मिला है। इसके साथ ही उनकी आर्थिक नीतियों, कर सुधारों और रक्षा आधुनिकीकरण ने भी अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारत का कद बढ़ाया है। हालांकि परेशान करने वाले पड़ोसियों द्वारा पैदा की गई मुश्किलों से यह फायदा कुछ सीमित हुआ है और उनसे मोदी के समक्ष चुनौतियां बढ़ी हैं। एक सूबाई नेता से दुनिया के सबसे बड़े लोकतंत्र का प्रधानमंत्री बनने के मोदी के अद्भुत राजनीतिक उत्थान में भारतीय मतदाताओं की उस मंशा का अहम योगदान रहा जिसमें वे एक निर्णायक सरकार चुनना चाहते थे।

प्रधानमंत्री बनने से पहले उन्होंने वादा किया था कि वह शासन के स्तर में गुणात्मक सुधार लाएंगे और राष्ट्रीय सुरक्षा को मजबूत बनाएंगे। हालांकि वह महत्वपूर्ण बदलाव के लिए लोकप्रिय जनादेश के साथ सत्ता में आए, लेकिन सत्ता में उनका रिकॉर्ड परिवर्तनकारी के बजाय परंपरावादी वाला ही रहा। उन्होंने तंत्र को सशक्त बनाने पर ही ध्यान दिया। परिवर्तनकारी पड़ाव अमूमन पीढ़ीगत अंतराल में ही आकार लेता है। मोदी जब सत्ता में आए तो अवसर को लपकने से चूक गए। वह क्रांतिकारी बदलाव को आकार देने के बजाय यथास्थितिवाद में सुधार करने तक ही सीमित रह गए। उनका आभामंडल भले ही कुछ कमजोर हुआ हो, लेकिन जनता के बीच अभी भी उनकी ऐसी पैठ है जिसकी देश में कोई तुलना नहीं हो सकती। मोदी के व्यक्तित्व में भी बदलाव आया है। चुनाव अभियान के दौरान आक्रामक रूप अख्तियार करने वाले मोदी अब मृदुभाषी, सतर्क और करिश्माई छवि वाले नजर आते हैं। उनसे मिलने वाले उनकी गर्मजोशी से खूब प्रभावित होते हैं। शायद इसी क्षमता ने निजी कूटनीति में मोदी का भरोसा बढ़ाया होगा। निश्चित रूप से मोदी ने अपनी शख्सियत के दम पर दुनिया के तमाम नेताओं के साथ सहज रिश्ते कायम किए हैं, लेकिन निजी समीकरणों वाली उनकी कूटनीति से ज्यादा ठोस फायदे नहीं मिले। मिसाल के तौर 2015 के अंत में उनके अचानक हुए लाहौर दौरे का यह नतीजा निकला कि पाकिस्तान ने भारत के सैन्य ठिकानों को निशाना बनाकर सिलसिलेवार हमलों को अंजाम दिया।

यह विडंबना ही है कि निजी कूटनीति में मोदी की शैली पर उन नेहरू की छाप नजर आती है जिन्हें वह और उनकी पार्टी अक्सर निशाने पर लेते रहते हैं। राजनीतिक और वैचारिक रूप से मोदी और नेहरू में कम ही समानताएं दिखती हैं। जैसे गरीब पृष्ठभूमि वाले मोदी संघर्ष करते हुए दुनिया की सबसे अधिक आबादी वाले लोकतंत्र के शीर्ष पद पर पहुंचे, जबकि नेहरू बेहद संपन्न परिवार से थे। नेहरू अंतरराष्ट्रीयवाद के हिमायती थे तो उसके उलट मोदी ने सत्ता हासिल करने के लिए 'इंडिया फर्स्ट' के नारे को अपनाया। फिर भी विदेश नीति को लेकर मोदी का नजरिया काफी कुछ नेहरू से मेल खाता है।

अवधेश राजपूत

फिलहाल भारत विदेश नीति के मोर्चे पर तमाम चुनौतियों से जूझ रहा है। दुनिया का हर छठा व्यक्ति भारतीय है, फिर भी हमारी हैसियत वैसी नहीं जैसी होनी चाहिए। भारत को चीन और पाकिस्तान के रूप में दो मुश्किल पड़ोसियों से जूझना पड़ता है। दोनों ही परमाणु शक्ति वाले देश हैं और भारत के खिलाफ उनकी साठगांठ किसी से छिपी नहीं रही। यह निश्चित रूप से क्षेत्रीय स्थिरता के लिए खतरा है। जहां मोदी पाकिस्तान से सीमा पार आतंक और हिमालयी क्षेत्र में चीनी सेना की घुसपैठ को रोकने में नाकाम रहे हैं वहीं वह अमेरिका के साथ भारत के रिश्तों को नए क्षितिज पर ले जाने में कामयाब हुए हैं। भारत के आर्थिक एवं सामरिक हितों की पूर्ति के लिए मोदी अमेरिका से प्रगाढ़ रिश्तों को जरूरी मानते हैं, मगर डोनाल्ड ट्रंप की अगुआई में अमेरिकी नीतियों में निरंतरता के अभाव ने मोदी का यह गणित भी कुछ गड़बड़ा दिया और उन्हें दुनिया के ताकतवर देशों के साथ रिश्तों को नए सिरे से संतुलन देना पड़ रहा है।

वैसे भी अमेरिका की ओर झुकाव वाली उनकी नीति से देश को बहुत लाभ हासिल नहीं हुआ है। पहले चिनफिंग के साथ वुहान में और फिर सोची में पुतिन के साथ मोदी की अनौपचारिक वार्ता भारत की रणनीतिक आवश्यकताओं को ही रेखांकित करती है। मोदी खुद स्वयं को व्यावहारिक और उत्साही नेता मानते हैं जो वैश्विक भू-राजनीति की बड़ी बिसात पर खेलना पसंद करते हैं। मोदी के तमाम कदम उनकी विदेश नीति की खास शैली को दर्शाते हैं जिनमें व्यावहारिकता से लेकर उत्साह तक के तमाम रंग उभरकर आते हैं और उनकी शोमैन वाली छवि भी सामने आती है। कूटनीति के स्तर पर हैरान कर देने वाले कदम उठाना भी उनकी थाती रही है। अगर ठोस नतीजों की बात करें तो अभी तक मोदी का रिकॉर्ड बहुत ज्यादा प्रभावी नहीं रहा है। हालांकि उनके समर्थक इस पर यही कहेंगे कि विदेश नीति में नई दिशा अपनाने के नतीजे कुछ समय बाद ही मिलेंगे और अभी उन्हें कुल चार वर्ष ही तो हुए हैं। इससे इन्कार नहीं कि गठबंधन सरकारों के लंबे दौर में भारत की सामरिक पकड़ कुछ कमजोर हुई और इसने आसपड़ोस में ही हमारी शक्ति को कुछ कुंद कर दिया। मोदी अभी तक इस नुकसान की भरपाई नहीं कर पाए हैं। इसी कारण आज नेपाल, श्रीलंका और मालदीव जैसे उन देशों पर भी चीन की सामरिक पकड़ मजबूत हो रही है जो अमूमन भारत के प्रभाव वाले देश माने जाते रहे हैं।

मोदी ने भारतीय कूटनीति में निश्चित रूप से गतिशीलता का संचार किया है, लेकिन उनका रिकॉर्ड निजी हैसियत में उठाए गए औचक कदमों को भी दर्शाता है जो विदेश नीति में घालमेल ही करते हैं। संस्थागत रूप और एकीकृत नीति निर्माण सुदृढ़ कूटनीति के अनिवार्य तत्व हैं जिसमें दीर्घावधिक दृष्टिकोण भी जरूरी है। अगर विदेश नीति सत्तारूढ़ नेताओं की निजी पसंद से बनने लगे तो उसके अपने कुछ जोखिम भी होते हैं जिनका भारत ने आजादी के बाद से ही अनुभव किया है। सक्रियता दिखाने के बजाय भारत सतर्क रवैये के साथ प्रतिक्रियावादी ही रहा है। भारत का यथार्थवादी सामरिक दृष्टिकोण संभवतः दुनिया में सबसे पुराना है। इस सिद्धांत को किसी और ने नहीं, बल्कि भारत के कालजयी रणनीतिकार चाणक्य ने प्रतिपादित किया था। विडंबना यह है कि भारत अब अपने इसी सिद्धांत को भूलता नजर आ रहा है।

(लेखक सामरिक मामलों के विशेषज्ञ और सेंटर फॉर पॉलिसी रिसर्च में फेलो हैं)

response@jagran.com

दोहरे मानदंडों का नया नमूना

बलबीर पुंज

यदि हरियाणा में कानून तोड़ने वालों की आलोचना उचित है तो तूतीकोरिन में हिंसक लोगों के बचाव का क्या मतलब?

तमिलनाडु में तूतीकोरिन स्थित वेदांता समूह की स्टरलाइट के तांबा संयंत्र के विरोध में आंदोलन और पुलिस की कार्रवाई से कुछ प्रश्नों के उत्तर खोजने आवश्यक हैं। इस दुर्भाग्यपूर्ण घटना में निरपराध लोगों की मौत का वास्तविक जिम्मेदार कौन है? क्या लोकतांत्रिक व्यवस्था में हिंसा का कोई स्थान है? हिंसक भीड़ से निपटने के लिए पुलिस के पास क्या विकल्प बचते हैं? तूतीकोरिन में जो कुछ हुआ वह अत्यंत खेदजनक और कष्टदायी है। यह घटना प्रादेशिक खुफिया तंत्र की विफलता को ही दर्शाती है। यहां तीन माह से स्टरलाइट संयंत्र के विस्तार के खिलाफ चल रहा प्रदर्शन 22-23 मई को यकायक हिंसक हो गया। प्रशासनिक चेतावनी-दिशानिर्देशों की अवहेलना और भीड़ के हिंसक होने पर जवाबी कार्रवाई स्वरूप पुलिस की गोली से 13 लोग मारे गए, जबकि दर्जनों घायल हो गए। कुछ राजनीतिक दल पुलिस की कार्रवाई को राज्य प्रायोजित आतंकवाद तो कुछ उसकी तुलना जलियांवाला बाग नरसंहार से कर रहे है। वेदांता पर आरोप है कि उसके संयंत्र के कारण क्षेत्र में पानी प्रदूषित हो रहा है। इससे स्थानीय लोग बीमार हो रहे हैं और मछली उद्योग भी प्रभावित हो रहा है।

लोकतंत्र में अपनी मांगों की पूर्ति और समस्याओं के समाधान के लिए हिंसा पर उतर आना कहां तक उचित है? क्या इससे प्रजातंत्र कमजोर नहीं होता? गत वर्ष अगस्त में जब डेरा प्रमुख गुरमीत सिंह के विरुद्ध यौन शोषण मामले में सीबीआइ की विशेष अदालत का निर्णय आया तब विरोध स्वरूप डेरा समर्थकों का उग्र रूप देश-विदेश की जनता ने देखा। इससे उपजी हिंसा में 38 लोग मारे गए। अधिकतर मौतें पुलिस की जवाबी कार्रवाई में हुईं। उस समय कई राजनीतिक-बौद्धिक चिंतकों सहित समाज के अधिकांश लोगों ने उपद्रवियों के आचरण और पुलिस की प्रारंभिक शिथिल कार्रवाई पर गंभीर सवाल उठाए। सीधे तौर पर मुख्यमंत्री मनोहर लाल खट्टर और उनकी सरकार को जिम्मेदार ठहरा दिया गया। ऐसे आरोप लगाए गए कि जब तक स्थिति हाथ से निकल नहीं गई तब तक कोई कार्रवाई नहीं की गई। यह भी कहा गया कि सरकार को इतनी बड़ी संख्या में डेरा समर्थकों के जुटने पर रोक लगानी चाहिए थी। इसी प्रकार का दोषारोपण जाट आंदोलन और रामपाल समर्थकों के मामले में भी किया गया था। हरियाणा की इस पृष्ठभूमि में तमिलनाडु के तूतीकोरिन की घटना को देखें। क्या पुलिस के पास कोई दूसरा विकल्प शेष था? जब हरियाणा के मामलों में कानून तोड़ने और हिंसा करने वाले डेरा, रामपाल एवं जाट आंदोलन समर्थकों को कटघरे में खड़ा किया जाना उचित है तब तूतीकोरिन में हिंसा पर उतारू हुए प्रदर्शनकारियों का पक्ष लेने का क्या मतलब? यह दोहरा मापदंड क्यों? लोकतंत्र में कानून-व्यवस्था राज्य संबंधित विषय होता है। जब देश में सभी नागरिकों को अपनी बात रखने और अपनी मांगों को लेकर शांतिपूर्ण प्रदर्शन, धरना देने और हड़ताल के संवैधानिक अधिकार प्राप्त हैं तो उसके स्थान पर हिंसा को एकमात्र विकल्प बनाना, कानून अपने हाथों में लेना और दूसरों के जीवन को खतरे में डालना क्या अपराध नहीं माना जाएगा?

तूतीकोरिन हिंसा पर तमिलनाडु के मुख्यमंत्री ईके पलानीसामी द्वारा गैर सरकारी संस्थाओं और असमाजिक तत्वों पर संदेह करने का एक बड़ा और स्वाभाविक कारण है। जब तमिलनाडु की वर्तमान अन्नाद्रमुक सरकार जनहित में और प्रदूषण नियंत्रण विभाग पर्यावरण को नुकसान से बचाने के लिए तूतीकोरिन स्टरलाइट संयंत्र के विरुद्ध कार्रवाई कर रही है और मामला शीर्ष अदालत में लंबित है तब प्रदर्शनकारियों के यकायक हिंसक होने का क्या औचित्य? क्या यह दुर्योग है कि जब दिल्ली स्थित आर्कबिशप अनिल कूटो सत्तारूढ़ भाजपा और प्रधानमंत्री मोदी के विरोध में ईसाई समाज को लामबंद करने की दिशा में कथित प्रार्थना करने का आह्वान कर रहे थे तब उसी कालावधि में तूतीकोरिन में चर्च के निकट प्रदर्शनकारी एकत्र हुए और फिर हिंसा शुरू हो गई?

तूतीकोरिन आंदोलन से फातिमा बाबू सहित कई पर्यावरणविद और गैर-सरकारी संगठनों के साथ कट्टरपंथी ईसाई प्रचारक मोहन सी लाजरस भी जुड़े रहे। स्टरलाइट संयंत्र विरोधी आंदोलन ने गति तब पकड़ी जब स्थानीय चर्चों ने लाजरस के माध्यम से क्षेत्र के ईसाई व्यापारियों को बंद बुलाने के लिए विवश किया। तूतीकोरिन से पहले 2011-12 में तमिलनाडु में ही कुडनकुलम स्थित देश के सबसे बड़े परमाणु संयंत्र के विरुद्ध विदेशी गैर सरकारी संस्थाओं ने स्थानीय लोगों को गुमराह कर आंदोलन को भड़काया था जिसमें ईसाई मिशनरियों ने सक्रिय भूमिका निभाई थी। वास्तव में इन सभी मजहबी संस्थाओं द्वारा देश की बड़ी परियोजनाओं का विरोध उनकी घबराहट को ही रेखांकित करता है। उन्हें डर है कि बड़ी-बड़ी आर्थिक परियोजनाओं से न केवल क्षेत्र का विकास और स्थानीय लोगों का भला होगा, अपितु दूरदराज के लोगों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति भी सुधरेगी। स्वाभाविक रूप से यह स्थिति चर्च के 'आत्मा के कारोबार' अर्थात मतांतरण के लिए अनुकूल नहीं है।

लगभग तीन माह पूर्व स्टरलाइट संयंत्र विरोधी प्रदर्शन की शुरुआत तूतीकोरिन के कुमाराट्टियापुरम गांव से हुई थी। वहां ग्रामीण भूख हड़ताल पर बैठ गए थे। चर्च के अतिरिक्त जिन शक्तियों ने वर्ष 2016-17 के जल्लीकट्टू आंदोलन में शामिल होकर अपने विभाजनकारी हितों की पूर्ति करने का प्रयास किया था उसी जमात ने तूतीकोरिन में भी ऐसी ही कोशिश तब शुरू कर दी जब एक अप्रैल 2018 को अलग तमिल राष्ट्र की मांग करने वाले तिरुमुरुगन गांधी कुमाराट्टियापुरम गांव पहुंच गए। उस समय जिन झंडों और बैनरों का उपयोग कर स्टरलाइट संयंत्र के विरुद्ध नारेबाजी की गई उसमें लिट्टे सरगना टीवी प्रभाकरण की तस्वीर लगी हुई थी। जब कभी भी ईसाई मिशनरियों की अनुचित कार्यशैली पर प्रश्न खड़ा होता है तो कई विदेशी वित्तपोषित गैर सरकारी संगठन उपासना एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता आदि के अधिकार पर आघात होने के नाम पर उत्पात मचाना प्रारंभ कर देते हैं। ऐसे संगठन न केवल भारत में विकास कार्यक्रमों को बाधित करने में शामिल हैं, अपितु मानवाधिकार हनन के मिथ्या दुष्प्रचार से विदेशों में देश की छवि भी खराब करते हैं। समय-समय पर ईसाई मिशनरियों और कई स्वयंसेवी संगठनों की कारगुजारियां उजागर होती भी रही है, किंतु सेक्युलरवाद के नाम पर उनके राष्ट्रविरोधी अभियानों पर नकेल कसने के बजाय उनका पर्दाफाश करने वाले राष्ट्रनिष्ठ संगठनों को ही कटघरे में खड़ा कर दिया जाता है। मोदी सरकार की नीतियों से आज विदेशी धनपोषित शक्तियां हतप्रभ हैं। कहीं तूतीकोरिन हिंसा ऐसी शक्तियों की बौखलाहट का दुष्परिणाम तो नहीं?

(लेखक राज्यसभा के पूर्व सदस्य एवं वरिष्ठ स्तंभकार हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

स्वयं का ज्ञान

स्वयं का ज्ञान वह सर्वोच्च ज्ञान है जिसकी अनुपस्थिति में हर ज्ञान निरर्थक है। यह ज्ञान स्वयं की पूर्णता और पराकाष्ठा है। इसके बिना सब कुछ अपूर्ण है, लेकिन मानव स्वभाव इसके विपरीत है जो केवल दूसरों को जानने व समझने का प्रयास करता है। अपने को जानने की ओर उसका ध्यान ही नहीं जाता है। दूसरों को जानकर कुछ भी हासिल नहीं होता है। हां अनुमान अवश्य लगाया जा सकता है, जो अधिकांशतः गलत होता है। यदि सही हो गया तो भी हासिल कुछ नहीं होता है, लेकिन यदि स्वयं को जानने व समझने का प्रयास करके अपने स्वयं के ज्ञान का अनुमान लगाया जाए तो एक न एक दिन स्वयं का अनुमान निश्चित ही सत्य सिद्ध होगा जो आत्मज्ञान की प्राप्ति की पहली सीढ़ी होगी। इसी सीढ़ी पर धीरे-धीरे चढ़ना सीख कर ही आत्म ज्ञान का विस्तार संभव है। इस सीढ़ी पर जैसे-जैसे कदम ऊपर की ओर बढ़ने लगते हैं, वैसे-वैसे स्वयं के अनुमान सही दिखने लगते हैं और यहीं से स्वयं का ज्ञान बढ़ने लगता है। इसमें निपुणता आने पर दूसरों के लिए अनुमान लगाने की आवश्यकता महसूस नहीं होती है। मनुष्य की सबसे बड़ी चुनौती स्वयं को पहचानने की है। इसके बिना उसका जीवन उस बहती हुई मझधार के समान है जिसका माझी मूर्छावस्था में हो। जीवन को सम्यक गति व दिशा देने के लिए स्वयं का ज्ञान अवश्यंभावी है। इसके अभाव में जीवन उसी मझधार के समान है जो बगैर माझी के बहे जा रही हो, जिसकी न तो कोई दिशा हो और न ही कोई तट हो।

सभी को यह जानना आवश्यक है कि उन्हें बनना क्या है, लेकिन इससे पहले यह जानना भी आवश्यक है कि हम क्या हैं। तभी आगे कदम रखकर व भविष्य की संरचना का निर्वहन कर पाना संभव हो सकेगा। ज्ञान की पहली सीढ़ी स्वयं को जानने की है। यदि इस स्थान पर अंधेरा है तो हर कहीं अंधेरा ही दिखाई देगा, लेकिन यदि यह स्थान प्रकाशित है तो दूसरे स्थानों पर भी प्रकाश ही दिखाई देगा। जीवन को सार्थक बनाने की लालसा जिस किसी में होती है उसे स्वयं के ज्ञान को जाग्रत करना ही होगा जिससे जीवन की नौका को पूर्णता के तट पर ले जाने में सफलता मिल सके। स्वयं को जान लेने के बाद ही दूसरों के ज्ञान का सदुपयोग हो पाता है, अन्यथा अज्ञान के रास्ते आया यही ज्ञान आत्मघाती हो जाता है।

वीके जायसवाल

पाठकनामा

pathaknama@nda .jagran.com

विपक्ष की अस्पष्ट नीति

वरिष्ठ पत्रकार प्रशांत मिश्र ने अपने आलेख आसान नहीं आखिरी साल की राह में नरेंद्र मोदी के सामने खड़ी चुनावी चुनौतियों के मद्देनजर भाजपा को अति आत्मविश्वास से बचने की जो सलाह दी है, वह 2019 के चुनावी संदर्भ में प्रथमदृष्टया सही लगती है, क्योंकि कर्नाटक चुनाव ने समूचे विपक्ष को जिस तरह से उत्साहित होने का अवसर प्रदान किया है, उसकी झलक कुमारस्वामी के शपथ ग्रहण समारोह में एकत्रित विपक्षी दलों के जमघट में दिखाई दी। बावजूद इसके यह मान लेना भी जल्दबाजी होगी कि विपक्ष की यह एकजुटता भाजपा के लिए चट्टान बन जाएगी। इस संदर्भ में इन विपक्षी दलों की नीयत और नीति को प्रधानमंत्री मोदी की ध्येयनिष्ठा और ईमानदारी के सामने रखकर परखना जरूरी है। दूसरी ओर कर्नाटक की भुरभुरी जमीन पर खड़ा विपक्ष अभी स्वयं में ही आश्वस्त नहीं हो पा रहा है कि उसकी यह चुनावी एकता कितनी टिकाऊ है? नेतृत्व का सवाल भी हर विपक्षी दल को अंदर ही अंदर परेशान कर रहा है। इनके लिए अगला संकट सीटों के बंटवारे का भी होगा, जिसमें हर क्षेत्रीय दल अधिक से अधिक लाभ की स्थिति में रहना चाहेगा। चुनाव प्रचार के समय ये विपक्षी नेता किस राष्ट्रीय एजेंडे को लेकर जनता के सामने जाएंगे? यह सवाल भी मोदी विरोध में एकजुट होने वाले क्षेत्रीय दलों के लिए परेशानी का सबब है। इस परिदृश्य से यही लग रहा है कि कर्नाटक का यह विपक्षी जमावड़ा केवल मोदी विरोध का खोखला प्रदर्शन भर था। यदि यही वास्तविकता है तो आगामी आम चुनाव में विपक्ष की यह दुरनीयत ही भाजपा की सबसे बड़ी ताकत बन जाएगी। आगामी लोक सभा चुनाव में अपने चार वर्षों के राष्ट्रहितैषी क्रिया-कलापों के साथ उतरने वाली भाजपा के विरोध में एकजुट विपक्षी दलों की नीतिगत अस्पष्टता और आपसी सामंजस्य का अभाव भी भाजपा को संबल प्रदान करेगा।

डॉ. विष्णु प्रकाश पाण्डेय, अलीगढ़

चिकित्सक का व्यवहार

चिकित्सा के पेशे को अच्छा माना जाता है, किंतु दुःखद है कि आज इस व्यवसाय के प्रति लोगों का नजरिया बदलता हुआ दिख रहा है। इसका प्रमुख कारण है चिकित्सक का मरीज के प्रति लापरवाही और दुर्व्यवहार। पैसे कमाने की होड़ में डॉक्टर ज्यादा मरीजों को देखते हैं, किन्तु एक मरीज पर उचित समय नहीं देते। अगर मरीज अपनी बीमारी के संदर्भ में कोई उचित प्रश्न भी पूछता है, तो वे उसे नजरअंदाज करते हैं। बहुत कम ही डॉक्टर हैं जो मरीजों के साथ अच्छे से पेश आते हैं। चिकित्सक का व्यवहार प्रत्येक मरीज के साथ समान होना चाहिए।

सौरभ पाठक, ग्रेटर नोएडा

और भी अच्छे नेता हैं

यह कहना उचित नहीं है कि कांग्रेस में राहुल और भाजपा में मोदी के बाद या उनसे योग्य नेता ही नहीं हैं। इन दोनों ही पार्टियों में एक से एक अच्छे अनुभवी और परिपक्व नेताओं की कोई कमी नहीं है। जरूरत है उन्हें उभारने की। जब तक राहुल व मोदी के सहारे पार्टियां चल रही हैं ठीक, नहीं तो दूसरी पंक्ति में तमाम योग्य नेता दोनों ही पार्टियों में मौजूद हैं।

वेद मामूरपुर, नरेला

राजनीति में संवाद

स्वतंत्र भारत के प्रथम राष्ट्रपति और पहले प्रधानमंत्री के बीच संबंध मधुर न होते हुए भी दोनों के बीच गजब का समन्वय था। लेकिन वर्तमान राजनीति में ऐसा देखने को नहीं मिलता। चुनाव के समय तो सब एक दूसरे के कट्टर दुश्मन बन जाते हैं। इसे समझना चाहिए कि चुनाव में हार-जीत तो लगी रहती है। इंदिरा गांधी और अटल बिहारी वाजपेयी जैसे नेता भी चुनाव हार चुके हैं, फिर आपसी संवाद इतने खराब क्यों? राजनीतिक संवाद उत्तेजक और कटाक्ष से रहित होने चाहिए।

rachnarastogi{{@gmail.com

जल प्रबंधन की जरूरत

पानी का संकट अब दिल्ली सहित पूरे देश में एक गंभीर समस्या बनता जा रहा है। कई राज्यों में तो इसको लेकर विवाद भी हो रहे हैं और कई बार मामला कोर्ट तक पहुंच जाता है। जिस वर्ष बारिश नहीं होती है उस वर्ष हमें कई हिस्सों में ट्रेन से पानी पहुंचाने तक की नौबत आती है। बिगड़ते पर्यावर्णीय परिस्थितियों में बारिश को लेकर किसी प्रकार की आस नहीं लगाई जा सकती है। इसलिए ऐसे समय में हमें एक बेहतर जल प्रबंधन की जरूरत है। अगले दो सालों के बाद बेंगलुरु जैसे आइटी शहर भी भयंकर जल संकट से जूझने वाले हैं। दिल्ली में हर साल गर्मियों में हरियाणा से पानी कम आने पर पानी का संकट आ जाता है। टैंकर और बाकी जल स्रोत इसके लिए पर्याप्त नहीं होते हैं। इसलिए अगर हमें अपने शहरों को बचाना है तो इसके बारे में शीघ्र ही उपाय करने होंगे, अन्यथा हमारे शहर भी वीरान हो जाएंगे। देश में खासकर उत्तर भारत में हिमालय से निकलने वाली नदियों में सालों भर पानी रहता है, लेकिन वह व्यर्थ होकर समुंद्र में चला जाता है। ऐसे में अगर हम इस जल का समुचित संरक्षण कर लें या फिर इन नदियों को दक्षिण भारत की बाकी नदियों के साथ जोड़ दें तो व्यर्थ में बहने वाले पानी का समुचित उपयोग किया जा सकता है। सरकार ने इस तरफ कदम बढ़ाए हैं, लेकिन इसमें तेज़ी लाने की जरूरत है। इससे समय रहते हम इस जल संकट से उबर सकते हैं। इसके साथ ही तालाब व जोहड़ों के विस्तार की भी जरूरत है। ये कम से कम भूजल स्तर को ठीक बनाए रखने में सहायक होते हैं। पशु-पक्षियों को भी इनसे पानी मिल जाता है। इसके लिए सरकार के साथ ही आम लोगों को भी जागरूक होने के जरूरत है, तभी संभावित जल संकट से पार पाया जा सकेगा।

नीरज झा, दिल्ली विवि

ट्वीट-ट्वीट

अगर आप अर्बन नक्सल के बारे में जानना चाहते हैं कि यह कैसे काम करता है तो उन लोगों की कोशिशों पर गौर कीजिए जो ईवीएम में मीनमेख निकालने में पूरी शिद्दत से जुटे हैं ताकि बूथ कैप्चरिंग के लिए कुख्यात पार्टियों को नया जीवन मिले और देश को तोड़ने वाली ताकतों को मजबूती मिल सके।

विवेक अग्निहोत्री@vivekagnihotri

अरुण जेटली को लिखी कुमार विश्वास की चिट्ठी से यही लगता है कि वह आम आदमी पार्टी के वैसे ही सदस्य बने हुए हैं जैसे भाजपा में शत्रुघ्न सिन्हा।

राहुल रौशन@rahulroushan

चेन्नई सुपर किंग्स के लिए आइपीएल में वापसी शानदार रही। यह टीम जीत की पूरी हकदार है, क्योंकि यह खिलाड़ियों से लेकर प्रशंसकों के साथ बेहतरीन ढंग से पेश आती है। वहीं कई मैचों में अपने उम्दा गेंदबाजी प्रदर्शन के दम पर सनराइजर्स हैदराबाद ने भी बखूबी समा बांधा। कुल मिलाकर प्रशंसकों को खेल की बढ़िया सौगात मिली।

इरफान पठान@IrfanPathan

अगर अपनी मां के इलाज के लिए विदेश जाते हुए भी राहुल गांधी को भाजपा के सोशल मीडिया से जुड़े लोगों का ख्याल आता है तो समझिए वे अपने काम को बखूबी अंजाम दे रहे हैं।

अभिजीत मजूमदार@abhijitmajumder

जनपथ

धोनी के जांबाज फिर उठा ले गए ताज,
शेन वाटसन का दिखा विस्फोटक अंदाज।
विस्फोटक अंदाज करारा शतक जमाया,
झूम उठा मैदान विजय का ध्वज फहराया।
बीस बरस में लोग बनाएं सूरत रोनी,
छत्तिस में दिखलाय रहे हैं जलवा धोनी।

– ओमप्रकाश तिवारी

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त. पूर्व प्रधान संपादक-स्व.नरेन्द्र मोहन. संपादकीय निदेशक-महेन्द्र मोहन गुप्त. प्रधान संपादक-संजय गुप्त, नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा जागरण प्रकाशन लि. के लिए डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित एवं 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित, संपादक (दिल्ली एनसीआर) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 23359961-62, नोएडा कार्यालय : 0120-3915800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No 50755/90 * इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई शुल्क अतिरिक्त। वर्ष 28 अंक 314